

मूर्तिपूजा: समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार का मूल कारण

संजय मोहन मित्तल, न्यू जर्सी आर्य समाज मंदिर, जर्सी सिटी अमेरिका

हिंदू धर्म के अनुयायी सामान्यतः धर्म भीरू हैं फिर भी भारत में भ्रष्टाचार का बोलबाला दिन पर दिन बढ़ता ही जा रहा है | इस विरोधाभास का मूल कारण मूर्ति पूजा ही प्रतीत होता है | महर्षि दयानंद ने अपने संपूर्ण जीवन में मूर्ति पूजा का जमकर विरोध किया | इस कारण उन्हें अनेक बार हिंसा और शारीरिक क्षति भी सहन करनी पड़ी | इसके उपरान्त वह मृत्योपरन्त मूर्ति पूजा को वेद सम्मत ना मानकर उसका खंडन वा विरोध करते रहे |

वेदों में ईश्वर का स्वरूप

वेदों में एक यत्र तत्र सर्वत्र ईश्वर की व्याख्या की गई है इसके अनेक प्रमाण हैं | इन प्रमाणों में और सहस्रो अन्य वैदिक ऋचाओं में कहीं भी ईश्वर के मूर्त रूप या भौतिक गुणों का वर्णन नहीं है |

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत् यजुर्वेद ४०।१।

इस ब्रह्माण्ड में अति सूक्ष्म से लेकर अति विशाल जो भी जगत है उन सबमें ईश्वर निवास करता है और उनको आच्छादित करता है |

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् यजुर्वेद १३।४।

यह सर्वथा विदित है कि वह एकमात्र सृष्टि का जनक, सब जगह समान रूप से उपस्थित, सब जीवों का स्वामी, सबसे पहले विद्यमान था |

न तस्य प्रतिमाऽस्ति यस्य नाम महद्यशः यजुर्वेद ३२।३।

पूज्य किर्ति करने वाला धर्मयुक्त आचरण ही जिसका नाम स्मरण है, उस परमेश्वर के तुल्य अवधि का साधन प्रतिकृति, मूर्ति वा आकृति नहीं है |

मूर्ति पूजा के व्यवहारिक दोष Practical issues with Idol Worship

समान्यतः मूर्ति का उपासक जब प्रतिमा के समक्ष होता है तो सात्विक व्यवहार करता है, विनम्रता, सत्य बोलना, धोखाधड़ी ना करना आदि; परंतु मूर्ति के सामने से हटते ही झूठ और धोखाधड़ी चालू। चूँकि वह भगवान को मंदिर में सीमित एक देशी मान रहा है, मूर्ति के सामने से हटते ही उसे ग़लत काम करते कोई परेशानी नहीं होती। यदि अन्तरात्मा ने थोड़ा कचोटा तो शाम को फिर से मंदिर में कुछ भेंट चढ़ा दी और अगले दिन से फिर भ्रष्ट आचरण शुरू। इसके विपरीत ईश्वर को सर्व व्यापी मानने वाला मनुष्य ईश्वर को सदैव अपने समक्ष पायेगा और इस अहसास मात्र से पाप कर्म को ना कर सत्य को आत्मसात करने में सहायता मिलेगी।

वेदों में ईश्वर के स्वरूप को और गहराई में देखे तो ऋग्वेद के पुरुष सूक्त की प्रथम पंक्ति की ओर ध्यान जाता है

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ऋग्वेद १०।९०।१।

यह असंख्य सिर, असंख्य आँख और असंख्य हाथ पाँव वाला पुरुष कहीं परलोक में नहीं बैठा है। यह तो विश्व रूपी परब्रह्म है। असंख्य प्राणियों के सिर उसके सिर हैं, उनकी असंख्य आँखें उसकी आँखें और उनके असंख्य हाथ पाँव उसके हाथ पाँव हैं। उस सर्वव्यापी ईश्वर को हर प्राणी के अंदर देखे। अन्य प्राणी से व्यवहार करते समय यह माने कि हमारे अंदर का ईश्वर उसके अंदर के ईश्वर के व्यवहार कर रहा है। ईश्वर के व्यवहार में कैसा झूठ, छल कपट या शोषण! पाप शोधन स्वतः ही हो जाएगा और वेदों का वाक्य कृण्वन्तो विश्वम् आर्यम् सब ओर गुंजायेमान होगा।